International Journal of Applied Research 2016; 2(1): 744-746

ISSN Print: 2394-7500
ISSN Online: 2394-5869
Impact Factor: 5.2
IJAR 2016; 2(1): 744-746
www.allresearchjournal.com
Received: 25-11-2015
Accepted: 26-12-2015

मीनू रानी
अस्सिटैंट प्रौफेसर, राजकीय नेशनल महाविद्यालय, सिरसा, हरियाणा, भारत

Correspondence
मीनू रानी
अस्सिटैंट प्रौफेसर, राजकीय नेशनल महाविद्यालय, सिरसा, हरियाणा, भारत

गजल गजर में व्याप्त सामाजिक चेतना

मीनू रानी

प्रस्तावना

मानव–समाज का ऐतिहासिक विकास श्रम पर आधरित उत्पादन और उसके वितरण के पारस्परिक सम्बन्धों पर आधारित है। मार्क्स प्रत्येक सामाजिक व्यवस्था का केन्द्र–बिन्दु अर्थ को स्वीकार करते हैं। उनके अनुसार उत्पादन–सम्बन्ध आधार है। 'आधार' के अनुरूप संस्थाएँ उभरती हैं तथा राजनीतिक, दार्शनिक, कानूनी, कलात्मक, धार्मिक आदि विचार उभरते हैं, जो 'परिगठन' (सुपर–स्ट्रक्चर) है। अतः 'आधार–परिगठन सातत्य' ही सामाजिक–आर्थिक रूपायन है। इस भाँति समाज के रचना–गठन में अर्थव्यवस्था, विचारों और संस्थाओं तीनों का संयोजन हो जाता है।[1] वर्तमान समाज के ऐतिहासिक विकास के निम्नलिखित सोपान बताए जाते हैं–

• आदिम युग, • दासमूलक समाज, • सामन्तवाद, • पूँजीवाद तथा • साम्यवाद।

यह अवस्था मानव–जाति की सर्वप्रथम सामुदायिक अवस्था थी, जो सबसे लम्बे काल तक रही और विश्व के सम्पूर्ण समाज को इस अवस्था से होकर गुजरना पड़ा। इसे प्रवृत्तिगत दृष्टि से 'आदिम साम्यवाद' भी कहा जाता है। इस युग की दो प्रमुख विशेषताएँ थीं– आजीविका के साधनों पर सामूहिक स्वामित्व और सामूहिक श्रम द्वारा प्राप्त उत्पादन का सभी सदस्यों में आवश्यकतानुसार वितरण। 'आदिम साम्यवादी काल में उच्च–नीच वर्ग नहीं थे, यहाँ तक कि यूथ से व्यक्ति के अलग अस्तित्व का ख्याल भी नहीं था।'[2] मध्य पाषाण युग (13वीं से 7वीं शताब्दी ई. पूर्व) में दो ऐसी निर्णायक घटनाएँ घटीं, जिनका मानव–जाति के परवर्ती इतिहास पर सर्वाधिक प्रभाव पड़ा। वह थीं कृषि और पशुपालन का सूत्रापात। इन दोनों ने अतिरिक्त उत्पाद के आधार प्रस्तुत किए फलस्वरूप व्यक्तिगत सम्पत्ति के जन्म के कारण सामाजिक सम्बन्धों, उत्पादन और वितरण के नए तौर–तरीकों की संभावनाएँ दिखने लगीं। फ्इस प्रकार अतिरिक्त उत्पाद सामाजिक असमानता के लिए आधार प्रस्तुत कर सकता था और उसने ऐसा किया भी। आदिम सामुदायिक सामाजिक सम्बन्धों के होने तथा व्यक्तिगत स्वामित्व का, एक नए प्रकार के परिवार, वर्गों और राज्य का उदय होने के साथ विग्रहपूर्ण सामाजिक–आर्थिक ढाँचों में संक्रमण का दौर शुरू हो गया।[3]

मनोज सोनकर कृत 'गज़ल – गजर' एक उच्चकोटि की व्यंग्य रचना है। ये साठोतरी हिन्दी कविता के प्रगतिशील कवि के रूप में विख्यात हैं। इस गज़ल संग्रह में भी इनके जीवन के सभी पहलू प्रखर रूप से विद्यमान हैं। मनोज जी बाह्य धरातल के साथ ही साथ आंतरिक धरातल पर भी गतिशील हुए हैं। अतः इनकी गज़लों में मर्मस्पर्शी तरलता भी विद्यमान है और प्रभावशाली कलात्मकता भी। इस अध्याय में सामाजिक चेतना को केंद्रित करके इससे जुड़े विभिन्न पहलुओं का विवेचन–विष्लेशण किया जा रहा है।

समाज में नित्य प्रति घटित होने वाली घटनाओं को देखकर वैसे तो प्रत्येक नागरिक जागरूक है। लेकिन साहित्यकार क्योंकि सहृदय होता है। इसलिए संपूर्ण मानव समाज में साहित्यकार को ही अधिक सजग सचेत, चेतन, विद्रोही आंदोलनकारी व परिवर्तन का मुखिया माना जाता है। सामाजिक चेतना प्रत्येक व्यक्ति में चैतन्य और मूर्त है। शिक्षा भी अभाववश या रूढ़ि से प्रभावित हो कुंठित हो जाती है। इसी से मुक्त रहना तथा कुंठा को अपनी अंतवृत्ति से तिरोहित किए रखना ही सामाजिक चेतना है। मानव की चेतना को परिवर्तित या विकसित करने में परिवेश का महत्त्वपूर्ण योगदान रहा है। अंर्तजातिय विवाह, रोजगार संबंधी नीतियां, सरकार द्वारा चलाई गई नीतियों से समाज में आए दिन परिवर्तन से कोई भी अनभिज्ञ नहीं है। मनोज सोनकर के अनुसार कहीं भी सुख नहीं है –

'खत भेजे थे हमने सुख को, चाहे थोड़ी सी ठंडक।
बिना बुलाए थैला थामें, देखा बैरी दुःख आया है।'[4]

समाज के संपूर्ण श्रेत्रा में विकास और परस्पर समानता के भाव ही सामाजिक चेतना के स्वरूप को निर्धारित करते हैं। प्राचीन समय में समाज धर्मिक व्यवस्था पर आधरित था। उस समय समाज का विकास चार वर्गों पर आधारित था। ब्राह्मण, क्षत्रिाय, वेश्य, शूद्र।

समाज को गुण व कर्म के आधर पर ही बांटा गया था। परंतु, परिवर्तन समाज का नियम है। जिस कारण बाद में यह व्यवस्था भी परिवर्तित हो गई। समाज में जाति प्रथा प्रचलित हो गई। उस समय स्त्री प्रताड़ना व उपेक्षा की शिकार थी। समाज में उसे कोई स्थान नहीं मिलता था। परंतु समाज–सुधारकों के आंदोलनों के फलस्वरूप आज स्त्री को पुरूष के समान अधिकार प्राप्त हैं। वह पुरूष के साथ हर कार्य में कंधे से कंधा मिलाकर कार्य कर रही है। परिवार के बदलते स्वरूप ने भी समाज को प्रभावित किया है।

'दशरथ तो चिंतित बड़े, बन न जाए राम,
बहस खड़ी करते हुए, कई गिनाए काम।'[5]

परिवार समाज की प्रारंभिक संस्थाओं में से एक है। प्रारंभ में संयुक्त परिवार होते थे, परस्पर प्रेम, सद्भाव एवं समानता की विचारधारा थी। परंतु आर्थिक प्रणाली में आए परिवर्तन ने संयुक्त परिवार को तोड़कर एकल परिवार में परिवर्तित कर दिया, जिससे समाज की विचारधरा अत्यधिक प्रभावित हुई। इसीलिए कवि सचेत करते हुए लिखते हैंः–
'हमदर्द मिले झूठे मौके ताक लूटे।
रोए घने जंगल शबाब झरे छूटे।'[6]
भ्रष्टाचार, शोषण, आतंक, अनीति, आपाधापी, आर्थिक प्रतिस्पर्धा जातीय तथा सांप्रदायिक संघर्ष ने समाज की अवधरणा को बदल दिया। मूल्यहीन समाज बौद्धिकता पर केंद्रित हो गया।
मनोज सोनकर ने अपनी गजलों में राजनीतिक तथ्यों पर कटाक्ष किया है। आज के नेता तो अपना उल्लू सीधा करते हैं। ये लोग आम जनता की भलाई का बहाना बनाकर खूब शोषण करते हैं। आज की राजनीति व्यक्ति को स्वार्थी बना रही है। वर्तमान राजनीति नीतिपरक ढ़ंग से राज्य चलाने की नीति न होकर साम, दाम, दण्ड, भेद किसी भी तरीके से अपनी सत्ता को बनाए रखने तक सीमित है। राजनेता स्वार्थ पूर्ति हेतू हर उन नियमों धर्मों और नीतियों का भूल जाता है, जिसका चुनाव के दौरान चीख–चीखकर ऐलान करता है। आज हमारे देश के राजनीतिज्ञ कुशल राजनेता का मुखौटा लगाकर अपने स्वार्थों की पूर्ति कर रहे हैं। मनोज सोनकर ने राजनेताओं के प्रति सचेत करते हुए लिखा है–

'खाना पीना नया नहीं है, राजा ने यह फरमाया है।
नेता तो सेवक ठहरा, कुछ करोड़ उसने खाया है।''[7]

आज की राजनीति में वही व्यक्ति सफल होता है जिसमें दुश्चरित्र का प्रत्येक लक्षण हो। राजनीति में तो सारे भ्रष्ट इकठ्ठे हुए हैं। जनता को लूटते हैं। कवि की चेतना देखिए–
''चोर चोर मौसेरे भाई, कहते आए बड़े सयाने
सगे हुए दोनों भइया अब, प्रजातंत्र की यह माया है''[8]
आज का नेता जनता को खरीदने, बहकाने और शोषण करने की कला में कुशल है। चाटुकारिता का गुण भी अनिवार्य है। लेकिन राजनीति का खेल तो पैसे का खेल है। बिना धन के राजनीति असम्भव है। आज के समाज में पैसा ही सबकुछ रह गया है। कवि ने इस भ्रष्ट वृति के प्रति व्यंग्य किया है–

'पैसा तो राजा हुआ, जब–जब उसके दास
गलत सही करवा धरे, चले काटता कान।'[9]

देश के भविष्य की बात भुलाकर हमारे नेता छोटे–छोटे स्वार्थ के लिए संसद में हंगामा करते हैं। वे अपने आप को दूध का धुला साबित करने के लिए दूसरों पर कीचड़ उछालते हैं। सामाजिक विकास में नेता बाधक हैं।
जैसे–

'रोटी लागे दूर, नेता बैरी अड़ा।
राजा नहीं फूल, हर मौसम में झड़ा।
रोए अब उपदेश, पाएं चिकना घड़ा।'[10]

भूमण्डलीकरण का दौर भूमण्डलीकरण हो गया है। आज अर्थ को अधिक महत्व दिया जा रहा है। आज व्यक्ति की अस्मिता उसके गुणों से नहीं आर्थिक सम्पन्नता से आंकी जाती है। वर्तमान भौतिकवादी समाज में व्यक्ति अपने अस्तित्व की रक्षा के लिए नैतिक, अनैतिक कार्य करने को तैयार हैं। आज मनुष्य का जीवन अर्थ के बिना परिभाषित ही नहीं किया जा सकता। जन्म से लेकर मृत्यु तक जीवन के प्रत्येक मोड़ पर अर्थ महत्वपूर्ण स्थान रखता है। आर्थिक व्यवस्थाओं से जुड़ी समस्याओं का बोलबाला दिन–प्रतिदिन निंरतर बढ़ता ही जा रहा है। परम्परागत निर्धनता की समारित के प्रति कवि जागरूक कर रहे हैं–

'भूख तो पुरानी है, जन–जन की कहानी है।
कुएं विशाल कई, गायब सिर्फ पानी है।।
कतार बढ़े दिन रात, बेकार दानी है।
तरक्की माने नाश, राजा तो ज्ञानी है।।
आजादी परी बड़ी, गढ़ी इक कहानी है।[11]

अर्थ सभी प्रकार के सुखों का सूचक है, इसलिए इसका जीवन में अत्यधिक महत्व है। परन्तु धन का संग्रह केवल आवश्यकता पूर्ति के लिए होना चाहिए। अर्थ के अनावश्यक महत्व ने चोर बाजारी, लूटखसोट, भ्रष्टाचार आदि का समाज के हर कोने में पहुंचा दिया है। कवि मनोज सोनकर जी चिंतित हैं कि आज आर्थिक परिदृश्य ने मनुष्य के जीवन को बदल दिया है–

'पूंजी का हमला है भारी, लगातार बैरी यह जारी।
डालर रूप अनेकों धरे, चले चलाता अपनी आरी।
दिन तो लागे भीख माँगते, रातें होती जाएं कारी।
गोला गोली रंग जमाए, बोली होती जाए खारी।
रोटी नाच नचाती भागे, शातिर दाबे महल अटारी।[12]

समाज में धन का वितरण असमान है, जिस कारण धनी अधिक धनी और निर्धन अधिक निर्धन होता जा रहा है। अर्थ की कमी के कारण आज परिवारों में भी तनाव बढ़ गया है। आज का मनुष्य बहुत कम समय में बहुत अधिक पा लेना चाहता है, इसके लिए चाहे उसे कोई भी अनैतिक कर्म करना पड़े। युवाओं का लगातार विदेशों में पलायन करना भी आर्थिक समस्या का कारण है। 'गजल–गजर' में भी आर्थिक समस्या को चित्रित किया गया है। जैसे–

झोपड़ी टूटी पड़ी है, खोपड़ी फूटी बड़ी है।
एक चेहरा फूल लाल, याद दरवाजे अड़ी है।
कुरसियों पर चोर बैठे, विपक्ष की भारी लड़ी है।
दूध के फूटे घड़े कुछ, वर्षा की लागी झड़ी है
हर जगह बाजार दीखे, रोग डालर की घड़ी है।'[13]

जिनके पास पैसा नहीं उनकी स्थिति बहुत ही दयनीय होती है। उन लोगों में निरन्तर गरीबी पनप रही है। आज हमारे समाज में भुखमरी है। पैसे की कमी मानव को पशु बना सकती है। मनोज सोनकर जी चिंतित हैं –

'रोटी लीगे दूर
नेता बैरी अड़ा।[14]

मनुष्य इस कमी को पूरा करने के कितना भी तुच्छ कार्य करने के लिए तत्पर रहता है।
वर्तमान समाज में पारिवारिक संबंध भी अर्थ के कारण समाप्त होते जा रहे हैं। पारिवारिक व्यवस्था भौतिकवाद के रंग में रंगी हैं। आज अर्थ के आगे सभी रिश्ते झुठे और बेमानी हो गये हैं। आज का मनुष्य बहुत ही स्वार्थी हो गया है। वह अपने सवार्थ को पूरा करने के लिए अपने परिवार को भी छोड़ देता है। आज मानवीय संवेदनाए समाप्त हो चुकी है। सम्बंध स्वार्थपरक हो गए हैं। मनोज सोनकर जी चिंतित हैं–

'गीत तो गड़ने लगे हैं।
रिश्ते अब सड़ने लगे हैं।'[15]

आत्मीयता के अभाव में आज परिवारों में तनाव बढ़ता जा रहा है। जिस कारण भाई–भाई का, पिता–पुत्र का, पति–पत्नी का, भाई–बहन के रक्त के सम्बन्ध भी खोखले होते जा रहे हैं। कवि ने बुढ़ापे पर व्यंग्य करते हुए लिखा है–

'बेटा हुआ अफसर
चहका बुढ़ापा है।
हाथ लगी पेन्सन
महका बुढ़ापा है।'[16]

पारिवारिक मर्यादाएं खंडित हो चुकी हैं। संयुक्त परिवार की अवधारणा मां–बाप और संतान तक सिमट गई है। वंश में वृद्धि के लिए पुत्र जन्म जरूरी है। पुत्रा आगे परिवार को बढ़ाता है, पारिवारिक संबंधों में तनाव ने पारिवारिक विघटन के कगार पर लाकर खड़ा कर देता है। हवस में मां अपनी बेटी को बूढ़े के संग ब्याहने को तैयार है। कवि ने इन तथ्यों पर चिंता जताई है। वर्तमान युग घौर अराजकता, अन्याय तथा भ्रष्टाचार का युग है। आज ईमानदार व्यक्ति का जीना कठिन है। भ्रष्टाचार का कुछ सीमा तक उत्तरदायी लचीली न्याय प्रणाली भी है। प्रशासक अपने अनुसार अपनी सुविधा के लिए नियमों को तोड़ते हैं। प्रशासक की इस कुप्रथा से आज हमारे समाज में अराजकता, असन्तोष, कुंठा फैली हुई है। कवि ने 'बिल्डरों' पर कटाक्ष करते हुए लिखा है–

'बिल्डर तो राजा हुए, करें शहर पर राज ।
साजिस गहराते हुए, चले छीनते हास।'[17]

भारतीय प्रशासन अपने कर्तव्य, नैतिकता, आदर्शों से गिर गया है। सत्ता के लाभ में जनता का शोषक करना, समाज में हिंसा फैलाना, जनता के धन का दुरूपयोग करना, दलबन्दी, निरंकुशता का वातावरण उत्पन्न करना उनके दोष हैं। व्यापारी, अधिकारी, राजनेता और न्याय व्यवस्था के लचिलेपन से ही भ्रष्टाचार बढ़ रहा है। उन्हीं की कृपा से देश में चोर–बाजारी तस्करी, काले धन को प्रश्रय मिलता है। पुलिस व्यवस्था तो हमारी सुरक्षा के लिए स्थापित की गई है। लेकिन पुलिस स्वयं आंतकित है, गुण्डों से। गुण्डों के सामने वह निरीह, बेजार व असहाय दिखाई देती है। चारों ओर इन्हीं का बोलबाला है। भ्रष्टाचार का। कवि ने निरंकुशता पर कटाक्ष करते हुए लिखा है–

'रिश्वत तो बपौती
बहादुर वीर अड़े
गुनाह चढ़े सीढ़ी
कानून बहुत कड़े।'[18]

आज के युग में प्रत्येक क्षेत्र में भ्रष्टाचार पनप रहा है।

निष्कर्ष

कहा जा सकता है कि भ्रष्टाचार दफतरों में इतना बढ़ चुका है कि गरीब आदमी की चक्कर काट–काटकर सारी उम्र निकल जाती है। लेकिन काम नहीं होता। काम होता है तो सिर्फ पैसे वालों का गरीबों पर कोई दया नहीं करता। अमीर वर्ग उनको अपने पैरों तले रौदते हैं। कवि ने भ्रष्टाचार फैलाने वालों को निरकुंष सांड की संबा देते हुए इनसे सचेत रहने की प्रेरणा दी है।

''सांड बहुत पाजी हुए, चले रौंदते खेत।
लोग बाग चीखा करे, हाकिम खेले तास''।[19]

अगर ध्यान पूर्वक देखा जाए तो अपराध जगत भी पैसे के आधार पर फलता है। इसे बढ़ावा देने वाले होते है हमारे बड़े–बड़े मंत्री, रणनीतिज्ञ, व्यापारी जिन्हें अधिक पैसे की हवस होती है। ये निरंतर जनता को लूटते रहते हैं।

सदंर्भ

1. डॉ. रमेश कुन्तल मेघ, आधुनिकता बोध और आधुनिकीकरण, पृ. 94।
2. राहुल सांकृत्यायन, मानव समाज, पृ. 15।
3. एम. सिदोरोव, ऐतिहासिक भौतिकवाद क्या है?, पृ. 25।
4. मनोज सोनकर'गजल–गजर ' पृ0 9।
5. मनोज सोनकर'गजल–गजर ' पृ0 16।
6. मनोज सोनकर'गजल–गजर ' पृ0 22।
7. मनोज सोनकर'गजल–गजर ' पृ0 10।
8. मनोज सोनकर'गजल–गजर ' पृ0 9।
9. मनोज सोनकर'गजल–गजर ' पृ0 9।
10. मनोज सोनकर'गजल–गजर ' पृ0 59।
11. मनोज सोनकर'गजल–गजर ' पृ0 15।
12. मनोज सोनकर'गजल–गजर ' पृ0 8।
13. मनोज सोनकर'गजल–गजर ' पृ0 26।
14. मनोज सोनकर'गजल–गजर ' पृ0 59।
15. मनोज सोनकर'गजल–गजर ' पृ0 94।
16. मनोज सोनकर'गजल–गजर ' पृ0 62।
17. मनोज सोनकर'गजल–गजर ' पृ0 55।
18. मनोज सोनकर'गजल–गजर ' पृ0 50।
19. मनोज सोनकर'गजल–गजर ' पृ0 76।